ऑस्टिन का संप्रभुता का वैधानिक सिद्धान्त (AUSTIN THEORY of LEGAL SOVEREIGNTY)

संप्रभुता के वैधानिक सिद्धान्त का सर्वोत्तम विश्लेषण जॉन ऑस्टिन ने 1832 में प्रकाशित अपनी पुस्तक विधानशास्त्र पर व्याख्यान (Lectures on Jurisprudence) में किया है। जॉन ऑस्टिन इंग्लैंड के उपयोगितावादी विचारक थे। वह मानते हैं कि राज्य एक कानूनी व्यवस्था (legal order) है, जिसमें एक सुनिश्चित प्राधिकार (Determinate Authority) शक्ति का सर्वोच्च स्रोत (ultimate source) होता है। ऑस्टिन, हाब्स और बेंथम के विचारों से बहुत अधिक प्रभावित थे और उनका विचार था कि "उच्चतर द्वारा निम्नतर को दिया गया आदेश ही कानून होता है।"

अपने इसी विचार के आधार पर ही ऑस्टिन ने संप्रभुता की अवधारणा का प्रतिपादन किया है, जो इस प्रकार है, "कोई निश्चित उच्च सत्ताधारी मनुष्य, जो स्वयं किसी वैसे ही उच्च सत्ताधारी के आदेश ~~का~~ पालन का अभ्यस्त न हो, यदि मनुष्य समाज के बड़े भाग से स्थाई रूप से अपने आदेशों का पालन कराने की स्थिति में हो तो वह उच्च सत्ताधारी मनुष्य (determinate human superior) उस समाज में संप्रभु होता है और वह समाज (उस उच्च सत्ताधारी मनुष्य सहित) एक राजनीतिक व स्वाधीन समाज अर्थात राज्य होता है।"

ऑस्टिन के संप्रभुता संबंधी विश्लेषण से संप्रभुता की निम्न विशेषताएं स्पष्ट होती है -

1) प्रत्येक स्वतंत्र राजनीतिक राज्य में आवश्यक रूप से कोई व्यक्ति या व्यक्तित्व संप्रभु होता है। प्रत्येक राजनीतिक समाज में प्रभुत्व शक्ति उसी प्रकार अनिवार्य है, जिस प्रकार पदार्थ के किसी पिंड में आकर्षण केन्द्र का होना अनिवार्य है।

2) संप्रभु किसी एक मानव या मानव समूह के रूप में हो सकता है किंतु वह आवश्यक रूप से निश्चित होना चाहिए। संप्रभुता सामान्य इच्छा, प्राकृतिक कानून, दैवी इच्छा, जनमत या मतदाता जैसे भावात्मक प्रतीकों में निहित नहीं हो सकती। वह तो एक ऐसा निश्चित मनुष्य या एक ऐसी निश्चित सत्ता होनी चाहिए जिस पर कोई कानूनी प्रतिबंध न हो।

3) इस प्रकार का निश्चित मनुष्य स्वयं ही किसी उच्च अधिकारी के आदेशों का पालन नहीं कर सकता। उसकी इच्छा सभी व्यक्तियों और समुदाय से उच्च है तथा वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी के नियंत्रण के अधीन नहीं हो सकता।

4) प्रभुत्व शक्ति को समाज की बहुसंख्या से पूर्ण आज्ञाकारिता प्राप्त होनी चाहिए। आज्ञाकारिता आदत का विषय होना चाहिए केवल यदा कदा नहीं। ऑस्टिन का विचार है कि संप्रभु अधिकारी के प्रति आज्ञाकारिता स्थिर और निरंतर होनी चाहिए।

5) प्रभुत्व शक्ति के आदेश ही कानून है और आदेश रूप में, आज्ञाओं को न मानने की दशा में दण्ड का अधिकारी होना पड़ता है।

(6) प्रभुत्व शक्ति अविभाज्य है क्योंकि वह एक इकाई है इसलिए वह खंडित नहीं हो सकती। प्रभुत्व शक्ति के विभाजन का अर्थ है संप्रभुता का विनाश।

ऑस्टिन ने इंग्लैंड में उपयोगितावादियों (utilitarian) द्वारा लोक विधि (common law) में सुधार करने हेतु प्रयत्न किए। वह रूढ़िवादियों (conservatives) के विरोध के कारण सफल नहीं हो पाये।

इसके पश्चात् ऑस्टिन ने सकारात्मक कानून (Positive Law) का सिद्धान्त प्रस्तुत किया जो राज्य की कानूनी प्रभुसत्ता के साथ निकट से जुड़ा है। उनका कहना था कि जो कानून सामाजिक संबंधों का नियमन करता है, जिसका ध्येय न्याय तथा जनकल्याण के साधन जुटाना है, वह प्रभुसत्ताधारी की ~~इच्छ~~ इच्छा की अभिव्यक्ति होता है। राज्य के विधानमंडल को उसका निरंतर संशोधन करने का अधिकार होना चाहिए।

ऑस्टिन ने प्राकृतिक कानून या प्राकृतिक विवेक के कानून का खंडन किया जो शुरू मध्ययुग में सत्ताधारियों की शक्ति पर अंकुश रखने का साधन रहा था। उसने कहा कि सदाचार या विज्ञान और अर्थशास्त्र, इत्यादि भी कानून की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। कानून केवल ऐसे नियम को मान सकते हैं जिसमें प्रस्तुत विशेषताएं पायी जाती हैं—

1. इसकी उत्पत्ति किसी ऐसे स्रोत से होनी चाहिए जो कि निर्णय करने में समर्थ हो।
2. इसमें किसी आदेश की अभिव्यक्ति होनी चाहिए और
3. वह प्रामाणिक होना चाहिए अर्थात इसका उल्लंघन करने पर दण्ड का विधान होना चाहिए।

ऑस्टिन का कहना है कि राज्य जो सकारात्मक कानून (Positive Law) लागू करता है, यदि ईश्वर के कानून या सामाजिक कानूनों (Social Law) के विरुद्ध हो

तो ऐसी हालत में राज्य के कानून को ही मान्य ठहराना चाहिए।
प्राकृतिक कानून या प्राकृतिक अधिकारों (Natural Rights) के समर्थक यह कहते थे कि यदि राज्य का कोई कानून इसके विरुद्ध हो तो उसका पालन अनिवार्य नहीं होगा। ऑस्टिन ने इस दावे को निरर्थक और निराधार ठहराया। इस तरह उसने विधिशास्त्र और न्यायशास्त्र के क्षेत्र में प्राकृतिक अधिकारों और कानून प्राकृतिक कानून के झाड़ झंखाड़ को साफ कर दिया जो लंबे अर्से से उसे घेरे हुए था।
इस सिद्धान्त के अनुसार प्रभुसत्ता राज्य का अनिवार्य और बुनियादी लक्षण है इसके बिना कोई समाज राज्य का रूप धारण नहीं कर सकता। बहुलवादी इस दावे को स्वीकार नहीं करते उनके विचार से राज्य की रचना के लिए प्रभुसत्ता अनिवार्य नहीं,

ऑस्टिन के संप्रभुता सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Austin's Sovereignty Theory) :-

ऑस्टिन द्वारा किए गए विश्लेषण के अनुसार सर्वोच्च शक्ति निश्चयात्मक, स्वेच्छाचारी, असीमित, सर्वव्यापक और स्थायी है। किन्तु ~~ऑस~~ ऑस्टिन एक वकील थे और उन्होंने संप्रभुता के सिद्धान्त की व्याख्या में केवल वैधानिक दृष्टिकोण (legally prospective) को ही दृष्टि में रखा है।
ऑस्टिन द्वारा संप्रभुता के व्यवहारिक पक्ष पर ध्यान दिए जाने के कारण सर हेनरीमेन, ब्राइस, ए. आर. लार्ड, ब्लण्टशली और जेम्स स्टीफन आदि ने सिद्धान्त की कटु आलोचना की है। लिकॉक ने लिखा है कि, "जैसे ही हम ऑस्टिन की रखी, पर वैधानिक धारणा से दूर जाते हैं वैसे ही हम भ्रम में पड़ जाते हैं।"

1. समाज में ऑस्टिन के निश्चित जनश्रेष्ठ की खोज पाना कठिन है-
ऑस्टिन के द्वारा जिस प्रकार के निश्चित संप्रभु की व्याख्या की गयी है, व्यवहार में उसे खोज पाना अत्यंत कठिन है। हेनरी मेन ने अपनी पुस्तक "Early institutions" में लिखा है कि इतिहास में इस प्रकार के निश्चित जनश्रेष्ठ के उदाहरण नहीं मिलते। उन्होंने लिखा है कि पूर्व के अनेक साम्राज्यों में ऐसी कोई चीज नहीं थी जिसे निश्चित उच्चतर सत्ता कहा जा सके।
मध्ययुग में यह निश्चित करना कठिन था कि राज्य संप्रभु है या चर्च। सामंतवादी युग में सामंतों की शक्ति कम नहीं थी। वर्तमान समय में भी अमेरिका जैसी संघात्मक व्यवस्था (federal system) वाले देशों में संप्रभु को निश्चित करना बहुत कठिन है।

2. कानून संप्रभु की आज्ञा मात्र नहीं होते :-
इस सिद्धान्त का यह प्रतिपादन कि संप्रभु के आदेश ही कानून होते हैं, ~~कि~~ त्रुटिपूर्ण है। संप्रभुता ही कानून का एकमात्र स्रोत नहीं है। आधुनिक विचारधारा के अनुसार भी परंपरागत प्रथाओं, न्याय संबधी निर्णयों, वैधानिक टीकाओं तथा औचित्य पर आधारित राजकीय व्यवस्थापन को कानून का स्रोत माना जाता है। कोई भी सत्ताधारी संप्रभु चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो मनमाने कानून नहीं बना सकता।
इस संबंध में डिग्विट ने यहाँ तक कहा है कि "राज्य कानून का निर्माण नहीं करता वरन कानून ही राज्य की स्थापना करते हैं। कानून केवल सामाजिक आवश्यकता का प्रकाशन ही होता है।"

3. शक्ति का अत्याधिक महत्व :-

इस सिद्धान्त के प्रतिपादन में शक्ति को अत्याधिक महत्व प्रदान किया गया है। इसमें यह बताया गया है कि सत्ताधारी अपने आदेशों का पालन शक्ति के आधार पर करवाता है, परन्तु वास्तविकता यह नहीं है। अधिकांश जनता कानूनों का पालन दंड के भय के कारण नहीं वरन इस कारण करती है कि कानून जनता की इच्छा की अभिव्यक्ति करते हैं और उनके पालन में जनता का ही कल्याण निहित होता है।

ऑस्टिन के सिद्धान्त में शक्ति को जो अत्याधिक महत्व प्रदान किया गया है उसी कारण हर्नशॉ (Hearnshaw) ने कहा है कि "ऑस्टिन के दर्शन में हवलदारी की गंध पायी जाती है।"

4. आधुनिक लोकतांत्रिक राज्यों (Modern Democratic State) पर लागू नहीं होता -

इस सिद्धान्त का यह प्रतिपादन की संप्रभु कोई निश्चित व्यक्ति होता है लोकतंत्र की इस मान्यता के विपरीत है कि प्रभुत्व शक्ति जनता में निहित होती है तथा लोकमत या जनता की ~~इच्छ~~ इच्छा ही राज्य में सर्वोपरि है।

वस्तुतः ऑस्टिन के विचार को कानूनी प्रभुता को मानने का ~~सह~~ परिणाम यह होगा कि हमें लोक प्रभुता (Popular Sovereignty) तथा राजनीतिक प्रभुता (Political Sovereignty) दोनों ही प्रकार की प्रभुताओं की सत्ता स्वीकार करनी होगी।

5. संप्रभुता अविभाज्य नहीं है:

ऑस्टिन संप्रभुता की अविभाज्य का प्रतिपादन करता है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टिकोण से संप्रभुता की अविभाज्यता को स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रत्येक राजनीतिक समाज में कर्तव्यों ~~के इस बंटवारे से स्पष्ट है कि संप्रभुता~~ का बंटवारा होता है और प्रशासनिक कर्तव्यों के इस बंटवारे से स्पष्ट है कि संप्रभुता विभाजित की जा सकती है।

इसके अलावा वर्तमान समय में संघात्मक राज्यों में तो संप्रभुता आवश्यक रूप से विभाजित होती है।

6. संप्रभुता सीमित नहीं है - ऑस्टिन द्वारा संप्रभुता के जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है उसके अनुसार संप्रभुता के सर्वप्रमुख लक्षण उसकी असीमितता तथा निरंकुशता है किन्तु आलोचक संप्रभुता की असीमितता को स्वीकार नहीं करते। वास्तव में राज्य की संप्रभुता पर नैतिक और धार्मिक सिद्धान्तों, रीति-रिवाजों और परंपराओं का प्रतिबंध होता है, और कोई भी संप्रभु इन प्रतिबंधों की अवहेलना करने का साहस नहीं कर सकता है।

7. अन्तर्राष्ट्रीयता के अनुरूप नहीं - ऑस्टिन का संप्रभुता सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीयता की धारणा का भी स्पष्ट उल्लंघन है। वैज्ञानिक प्रगति तथा यातायात और संवाद के साधनों के विकास में विश्व के विभिन्न देशों को एक दूसरे के बहुत अधिक समीप ला दिया है और वर्तमान समय में एक राज्य की संप्रभुता अन्तर्राष्ट्रीय कानून और विश्व जनमत से बहुत अधिक सीमित होती है।

ऑस्टिन के संप्रभुता सिद्धान्त का महत्व :-

यद्यपि ऑस्टिन के संप्रभुता सिद्धान्त की अनेक आलोचना की गयी है, लेकिन इनमें से अधिकांश आलोचनाएं भ्रांति और ऑस्टिन के दृष्टिकोण को न समझने के कारण ही हुई है। ऑस्टिन ने वैधानिक दृष्टिकोण (legal / prospective) के आधार पर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है और इस दृष्टि से यह सिद्धान्त नितांत सही है। यह सिद्धान्त नितान्त स्पष्ट और तर्कसंगत है और इसके

द्वारा किए गए सिद्धान्त के इस विवेचन से संप्रभुता के लौकिक और राजनीतिक रूपों में अनिश्चितता में ढल जाती है। बोंदा, हॉब्स, रूसो तथा बेन्थम के अद्वैतवादी विचारों को वैज्ञानिक रूप देने का श्रेय ऑस्टिन को ही है।